# समाज सुधारक कबीर

कबीर मूलतः संत कवि है। कविता के माध्यम से उन्होंने समाज का सुधार किया है। वास्तव में कबीर न तो हिंदू थे और न तो मुसलमान। वल्कि वे थे एक इंसान। जिसने एक तरफ प्रभु का साक्षात्कार किया और दूसरी तरफ अपने काव्य के माध्यम से जनता का भी। प्रभु के साथ साक्षात्कार की बात जितनी प्रमाणिकता और खुला पन के साथ कह पाते हैं शायद ही कोई दूसरा भक्त कवि कह पाया है। तत्कालीन समाज के पंडित और मुल्लाओं को जिस तरह झंकझोर दिया संपूर्ण मध्यकाल में कोई व्यक्ति ऐसा नहीं कर सका। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं वे मुसलमान होकर भी मुसलमान नहीं थे, हिंदू होकर भी हिंदू नहीं थे, साधु होकर भी साधु नहीं थे, वैष्णव होकर भी वैष्णव नहीं थे, योगी होकर भी योगी नहीं थे। वे भगवान की ओर से ही सबसे न्यारे बनाकर भेजे गए थे। वे भगवान के नरसिंह अवतार के प्रति मूर्ति थे।

कबीर दास जिस समय भारतीय समाज के सुधार के लिए अवतरित होते हैं, उस समय हिंदू और मुसलमान एक दूसरे के विरोधी बन गए थे। शैव और शाक्तों में संघर्ष चल रहा था। सगुण और निर्गुण में स्पष्ट विरोध था। हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं कबीर ऐसे ही मिलन बिंदु पर खड़े थे। जहाँ से एक और हिंदुत्व निकलता है, तो दूसरी ओर से मुसलमान। जहाँ एक ओर ज्ञान निकलता है, तो दूसरी को अशिक्षा। जहां एक ओर से योग निकलता है, तो दूसरी ओर भक्ति। जहां से एक ओर निर्गुण भावना निकलती है तो दूसरी ओर सगुण साधना। उसी प्रशस्त चौराहे पर ही कबीर खड़े थे। कबीर दास इस संपूर्ण बिखराव के केंद्र में थे। उन्होंने उन सभी शक्तियों का विरोध किया जो भारतीय जनता को विखराव की ओर ले जा रही थी, तथा उन्हें एक सूत्र में बांधने का प्रयास किया।

कबीर पढ़े लिखे नहीं थे पर बहुसूत थे। उन्होंने समाज के अबमानना, अपमान और शोशण को देखा था तथा झेला भी था। इसलिए उनकी वाणी तिखी हो गई है। उन्होंने धर्म और समाज की असंगतियों पर व्यंग किया है। उनके मूख्य शिकार धर्म के ठेकेदार शेख मुल्ला और ब्राह्मण हैं। उन्होंने वाह्याचार, नमाज, काशी, काबा, माला, जौ, छापा, तिलक आदि पर प्रहार किया है। मुल्लाओं कि धर्मांधता पर व्यंग करते हुए उन्होंने कहा है कि खुदा तो सब जगह रहता है फिर मस्जिद में मुर्गा की तरह चिल्ला चिल्ला कर उसे क्यों पुकारते हो।

" काकर पाथर जोइ कै मस्जिद लई बनाय। ता चढ़ी मुल्ला बांग दै क्या बहिरा हुआ खुदाय।।"

इसी प्रकार उन्होंने पंडितो के कर्मकांड का विरोध किया है जो केस मुंडाकर दिखाने के लिए साधु बन जाते हैं .....

"केशन कहा बिगाड़िया जो मुड़े सौ बार। मन को क्यों न मुड़या जा मैं भरा विकार।।"

इन्होंने पंडितों के उन कर्मकांड का विरोध किया है जिसमें मूर्ति पूजा का विधान है.....

"पाथर पुजै हरि मिले तो मैं पुजूं पहार। या ते वह चाकि भली जा पिस खाए संसार।।"

कबीर ने तात्कालिक मानव समाज को प्रेम का पाठ पढ़ाया है। प्रेम सबसे बड़ा होता है ज्ञान का ओहदा नहीं.....

"पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ पंडित भया न कोय। ढाई आखर प्रेम का पढ़े सो पंडित होय।।"

इन बातों से ऐसा लगता है कि कबीर बहुत बड़े समाज सुधारक थे। उन्होंने मध्यकाल को झंकझोर दिया था। किंतु वे मूलतः संत थे। निर्गुण निराकार ब्रह्म के उपासक थे। जिस ब्रम्ह का न तो आदि है न अंत।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कबीर मूलतः समाज सुधारक थे। कविता उनके लिए मात्र एक माध्यम है। जिसके माध्यम से वे अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करते हैं।